सीखने की कला

मौजूदा समय में समाज की यह मांग है कि व्यक्ति अधिक से अधिक कार्यकुशल हो अब वह चाहे इंजीनियर हो, तकनीकी विशेषज्ञ हो, वैज्ञानिक हो या मनोचिकित्सक। लेकिन क्या आपको नहीं लगता कि इसमें एक बड़ा ख़तरा है, क्योंकि संचित ज्ञान के आधार पर दक्षतापूर्ण कामों की यह मांग हममें कोई स्पष्टता ('क्लैरिटी') नहीं आने देगी? जब जीवन में कार्य कुशलता या कौशल ही सब कुछ हो जाता है। और वह भी केवल इस कारण नहीं कि यह आजीविका का ज़रिया है बल्कि इसलिए भी कि आपको शिक्षित ही इसीलिए किया गया है तब वह कौशल अनिवार्य रूप से आपमें सत्ता, अहंकार और आत्म-महत्ता का एक भाव ले आता है। हमारे सारे स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालय इसी उद्देश्य से चल रहे हैं।

सीखने की कला में केवल दक्षतापूर्ण काम सीखना और उसके लिए ज़रूरी जानकारियां इकट्ठी करना ही शामिल नहीं है बल्कि ऐसा बहुत कुछ है जो सीखने की कला में आता है और जिसका जानकारियों के संग्रह से कोई लेना देना नहीं होता। सीखना दो तरह से होता है पहला सीखना वह है जिसमें हम अनुभवों, किताबों, और अपनी पढ़ाई-लिखाई के माध्यम से बहुत सारा ज्ञान प्राप्त और संचित करते हैं और जिसका इस्तेमाल हम दक्षतापूर्ण कामों में कर सकते हैं दूसरा सीखना वह है जिसमें हम सिवाय निहायत जरूरी चीज़ों के कुछ भी संचित, और अंकित नहीं करते। पहली वाली स्थिति में मस्तिष्क ज्ञान का संचय करता है और फिर उस संचय से कुशलता या अकुशलतापूर्वक काम करता है। दूसरी वाली स्थिति में मस्तिष्क इतना सजग हो जाता है कि वह केवल उन चीज़ों को अंकित और संचित करता है जो बेहद जरूरी है, और इसके सिवा कुछ नहीं। ऐसी स्थिति में मस्तिष्क संचित ज्ञान से प्रभावित नहीं होता और उसके शोरगुल-कोलाहल से बचा रहता है।

सीखने की यह कला मस्तिष्क में किसी भी प्रकार की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया को अंकित नहीं होने देती इसमें केवल उन्हीं चीज़ों का अंकन होता है जो दक्षतापूर्ण काम करने के लिए आवश्यक हैं। ऐसे में मस्तिष्क ज्ञान का उपयोग आवश्यकतानुसार कर सकता है और साथ-ही मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में किसी भी प्रकार के अंकन से मुक्त भी रह सकता है। यह बड़ा ही मुश्किल काम है, यानी इतनी सजगता कि केवल उन्हीं चीज़ों का अंकन हो जो आवश्यक है और उन चीज़ों का बिल्कुल नहीं जो अनावश्यक हैं। यानी चाहे कोई आपकी बेइज्जती करे या खुशामद, या आपको कुछ कहे, पर इनमें से किसी भी चीज़ का अंकन नहीं होने देना। इससे हमारे भीतर एक असाधारण स्पष्टता आती है; अर्थात् अंकन इस तरह होता है कि मनोवैज्ञानिक तौर पर किसी 'मैं' या 'स्व' के ढांचे का निर्माण नहीं होता। ''मैं'' का ढांचा तब बनने लगता है जब उन चीज़ों का अंकन शुरू हो जाता है जो अनावश्यक हैं, जैसे अपने नाम, अपने अनुभवों, अपने अभिमतों और निष्कर्षों को अहमियत देना। ये सारी चीज़ें अहं की ऊर्जा को तीव्र करती हैं जो हमेशा विकृति लाती हैं।

सीखने की कला में इस असाधारण स्पष्टता का बोध होता है। इसके बाद हम किसी काम में चाहे जितना कौशल दिखा लें लेकिन अगर वहां स्पष्टता नहीं है तो अहंकार ही पैदा होता है। यह अहंकार फिर व्यक्तिगत रूप में अथवा समूह या राष्ट्र के रूप में भी अभिव्यक्त हो सकता हैं। अहंकार स्पष्टता को नहीं आने देता। स्पष्टता के बिना करुणा नहीं आ सकती और करुणा के अभाव में कौशल बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। स्पष्टता के बिना उस प्रज्ञा का भी जागरण नहीं हो सकता जो न तो आपकी है, न मेरी है, बल्कि सिर्फ प्रज्ञा है। उस प्रज्ञा की अपनी क्रिया होती है जो यांत्रिक नहीं होती और इसलिए उसका कोई कारण नहीं होता।

'द होलनॅस ऑफ लाइफ' सानेन, १४ जुलाई १९७७

देखने और सुनने की कला के समान सीखने की कला में भी विचार की कोई गति नहीं होती। विचार तब ज़रूरी होता है जब कुशलतापूर्वक काम करने के लिए ज्ञान के संचय की ज़रूरत हो, अन्यथा विचार का कोई स्थान नहीं होता। इससे एक असाधारण स्पष्टता आती है। इस स्पष्टता में विचार द्वारा 'मैं' या 'स्व' के रूप में निर्मित कोई केन्द्र नहीं होता जहां से कि व्यक्ति काम कर सके। क्योंकि जहां पर यह केन्द्र होगा वहां उसकी परिधि भी होगी, और जहां परिधि होगी वहां प्रतिरोध और विभाजन भी होगा। और विभाजन भय के मूल कारणों में से एक है। स्पष्टता के बिना कौशल जीवन में एक अति विध्वंसक चीज़ बन जाती है। विश्व में आज यही हो रहा हैं। मनुष्य चन्द्रमा पर पहुंच कर अपने देश का झंडा गाड़ रहा है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उसमें स्पष्टता आ गई। विचार की मदद से आज इतना अधिक तकनीकी विकास हो चुका है और इसका परिणाम यह है कि युद्धों में मनुष्य एक-दूसरे को कुशलतापूर्वक मार रहा है क्या यह सब स्पष्टता है? विचार उस चीज़ को कभी नहीं समझ सकता जो समग्र है, जो सीमा और काल के बंधन से मुक्त है।